परशुरामकृत शिवजी का स्तोत्र[1]

परशुरामजी अपनी प्रतिज्ञापूर्ति हेतु शिवलोक में जाकर भगवान् शिव के सामने प्रस्तुत हुए। तदनन्तर महादेवजी के पूछने पर परशुराम ने कहा–'दयानिधान! मैं भृगुवंशी जमदग्निपुत्र परशुराम हूँ। आपका दास हूँ। आपके शरणागत हूँ। आप मेरी रक्षा करें।' इसके बाद अपने पिता के वधसंबंधी सारी घटना विस्तार से सुनाकर परशुराम ने कहा कि मैंने पृथ्वी को 21 बार क्षत्रियशून्य करने तथा मेरे पिता का वध करनेवाले कार्तवीर्य को मारने की प्रतिज्ञा की है। आप मेरी प्रतिज्ञा को पूर्ण करें।

तब शंकरजी ने परशुराम से कहा–हे वत्स! आज से तुम मेरे पुत्र के समान हुए, अत: मैं तुम्हें ऐसा गुह्य मन्त्र प्रदान करूँगा जो त्रिलोकी में दुर्लभ है। इसी प्रकार एक ऐसा परम अद्‌भुत कवच बतलाऊँगा, जिसे धारण करके तुम मेरी कृपा से अनायास ही कार्तवीर्य का वध कर डालोगे तथा तुम 21 बार पृथ्वी को भूपालों से शून्य भी कर दोगे।

तत्पश्चात् शंकरजी ने परशुराम को दुर्लभ मन्त्र और 'त्रैलोक्यविजय' नामक कवच प्रदान किया। उसी समय उन्हें सम्पूर्ण वेद–वेदांग भी पढ़ा दिये। तदनन्तर शिवजी ने परशुराम को नागपाश, पाशुपतास्त्र, दुर्लभ ब्रह्मास्त्र, आग्नेयास्त्र, नारायणास्त्र, वायव्यास्त्र, वारुणास्त्र, गान्धर्वास्त्र, गारुड़ास्त्र, जृम्भणास्त्र, गदा, शक्ति, परशु, अमोघ उत्तम त्रिशूल, विधि–पूर्वक नाना प्रकार के शस्त्रास्त्रों के मन्त्र, शस्त्रास्त्रों के संहार और संधान, अक्षय धनुष, आत्मरक्षा का उपाय, संग्राम में विजय पाने का क्रम, अनेक प्रकार के मायायुद्ध, मन्त्रपूर्वक हुंकार, अपनी सेना की रक्षा तथा शत्रुसेना के विनाश का ढंग, संसार को मोहित करनेवाली तथा बुढ़ापे और मृत्यु का हरण करनेवाली विद्या आदि बातें सिखायी। परशुराम ने चिरकालतक गुरु के यहाँ ठहरकर संपूर्ण विद्याओं को सीखा। इसके बाद वे अपने आश्रम लौट आये।

शिवलोक में परशुराम ने जाकर बड़े हर्ष के साथ भक्तिपूर्वक सिर झुकाकर शिवजी को नमस्कार किया था। उस समय शिवजी का दर्शन करके परशुराम परम संतुष्ट हुए थे। शोक से पीड़ित तो वे थे ही; अत: आँखों में आँसू भरकर अत्यन्त कातर हो हाथ जोड़कर शान्तभाव से दीन एवं गद्‌गदवाणी के द्वारा शिवजी की स्तुति करने लगे थे।

परशुराम बोले–ईश! मैं आपकी स्तुति करना चाहता हूँ, परंतु स्तवन करने में सर्वथा असमर्थ हूँ। आप अक्षर और अक्षर के कारण तथा इच्छारहित हैं, तब मैं आपकी क्या स्तुति करूँ? मैं मन्दबुद्धि हूँ; मुझमें शब्दों की योजना करने का ज्ञान तो है नहीं और चला हूँ देवेश्वर की स्तुति करने । भला, जिनका स्तवन करने की शक्ति वेदों में नहीं है, उन आपकी स्तुति करके कौन पार पा सकता है? आप मन, बुद्धि और वाणी के अगोचर, सार से भी साररूप, परात्पर, ज्ञान और बुद्धि से असाध्य, सिद्ध, सिद्धों द्वारा सेवित, आकाश की तरह आदि, मध्य और अन्त से हीन तथा अविनाशी, विश्व पर शासन करनेवाले, तन्त्ररहित, स्वतन्त्र, तन्त्र के कारण, ध्यान द्वारा असाध्य, दुराराध्य, साधन करने में अत्यन्त सुगम और दया के सागर हैं। दीनबन्धो! मैं अत्यन्त दीन हूँ। करुणासिन्धो! मेरी रक्षा कीजिये। आज मेरा जन्म सफल तथा जीवन

---

1. इस लेख को इसी पुस्तक में प्रस्तुत 'शिवोपासक भगवान् परशुराम' की कथा के साथ पढ़ें।

सुजीवन हो गया; क्योंकि भक्तगण जिन्हें स्वप्न में भी नहीं देख पाते, उन्हीं को इस समय मैं प्रत्यक्ष देख रहा हूँ। जिनकी कला से इन्द्र आदि देवगण तथा जिनके कलांश से चराचर प्राणी उत्पन्न हुए हैं, उन महेश्वर को मैं नमस्कार करता हूँ। जो सूर्य, चन्द्रमा, अग्नि, जल और वायु के रूप में विराजमान हैं, उन महेश्वर का मैं अभिवादन करता हूँ। जो स्त्रीरूप, नपुंसकरूप और पुरुषरूप धारण करके जगत् का विस्तार करते हैं, जो सबके आधार और सर्वरूप हैं, उन महेश्वर को मैं नमस्कार करता हूँ। हिमालय-कन्या देवी पार्वती ने कठोर तपस्या करके जिनको प्राप्त किया है। दीर्घ तपस्या के द्वारा भी जिनका प्राप्त होना दुर्लभ है; उन महेश्वर को मैं नमस्कार करता हूँ। जो सबके लिये कल्पवृक्षरूप हैं और अभिलाषा से भी अधिक फल प्रदान करते हैं, जो बहुत शीघ्र प्रसन्न हो जाते हैं और जो भक्तों के बन्धु हैं; उन महेश्वर को मैं नमस्कार करता हूँ। जो लीलापूर्वक क्षणभर में अनन्त विश्व-सृष्टियों का संहार करनेवाले हैं; उन भयंकर रूपधारी महेश्वर को मेरा प्रणाम है। जो कालरूप, काल के काल, काल के कारण और काल से उत्पन्न होनेवाले हैं तथा जो अजन्मा एवं बारंबार जन्म धारण करनेवाले आदि सब कुछ हैं; उन महेश्वर को मैं मस्तक झुकाता हूँ। यों कहकर भृगुवंशी परशुराम शंकरजी के चरण-कमलों पर गिर पड़े। तब शिवजी ने परम प्रसन्न होकर उन्हें शुभाशीर्वाद दिया। जो भक्तिभाव-सहित इस परशुरामकृत स्तोत्र का पाठ करता है, वह सम्पूर्ण पापों से पूर्णतया मुक्त होकर शिवलोक में जाता है।

ईश त्वां स्तोतुमिच्छामि सर्वथा स्तोतुमक्षमम्। अक्षराक्षरबीजं च किं वा स्तौमि निरीहकम्।।
न योजनां कर्तुमीशो देवेशं स्तौमि मूढधीः। वेदा न शक्ता यं स्तोतुं कस्त्वां स्तोतुमिहेश्वरः।।
बुद्धेर्वाङ्मनसोः पारं सारात्सारं परात्परम्। ज्ञानबुद्धेरसाध्यं च सिद्धं सिद्धैर्निषेवितम्।।
यमाकाशमिवाद्यन्तमध्यहीनं तथाव्ययम् । विश्वतन्त्रमतन्त्रं च स्वतन्त्रं तन्त्रबीजकम्।।
ध्यानासाध्यं दुराराध्यमतिसाध्य कृपानिधिम्। त्राहि मां करुणासिन्धो दीनबन्धोऽतिदीनकम्।।
अद्य मे सफलं जन्म जीवितं च सुजीवितम्। स्वप्नादृष्टं च भक्तानां पश्यामि चक्षुषाधुना।।
शक्रादयः सुरगणाः कलया यस्य सम्भवाः। चराचराः कलांशेन तं नमामि महेश्वरम्।।
यं भास्करस्वरूपं च शशिरूपं हुताशनम्। जलरूपं वायुरूपं तं नमामि महेश्वरम्।।
स्त्रीरूपं क्लीबरूपं च पुंरूपं च बिभर्ति यः। सर्वाधारं सर्वरूपं तं नमामि महेश्वरम्।।
देव्या कठोरतपसा यो लब्धो गिरिकन्यया। दुर्लभस्तपसां यो हि तं नमामि महेश्वरम्।।
सर्वेषां कल्पवृक्षं च वाञ्छाधिकफलप्रदम् । आशुतोषं भक्तबन्धुं तं नमामि महेश्वरम्।।
अनन्तविश्वसृष्टीनां संहर्तारं भंयकरम् । क्षणेन लीलामात्रेण तं नमामि महेश्वरम्।।
यः कालः कालकालश्च कालबीजं च कालजः। अजः प्रजश्च यः सर्वस्तं नमामि महेश्वरम्।।
इत्येवमुक्त्वा स भृगुः पपात चरणाम्बुजे । आशिषं च ददौ तस्मै सुप्रसन्नो वभूव सः।।
जामदग्न्यकृतं स्तोत्रं यः पठेद् भक्तिसंयुतः। सर्वपापविनिर्मुक्तः शिवलोकं स गच्छति।।

(ब्रह्मवैवर्तमहापुराण, गणपतिखण्ड-29/43-57)

(उपर्युक्त लेख गीताप्रेस, गोरखपुर द्वारा प्रकाशित कल्याण के संक्षिप्त ब्रह्मवैवर्तपुराणांक पर आधारित है।)

❀❀❀❀❀❀